INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES
(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)
DOI : 03.2021-11278686 ISSN : 2582-8568 IMPACT FACTOR : 7.560 (SJIF 2024)

गुरु शिष्य परंपराः अतीत से वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

(Guru Shishya Tradition: From Past to Present Perspective)

प्रो. संजय कुमार
विभागाध्यक्ष
भूगोल विभाग,
राजेंद्र कॉलेज, छपरा।

DOI No. 03.2021-11278686 **DOI Link ::** https://doi-ds.org/doilink/03.2024-34249936/IRJHIS2403001

सारांश :

मानव समाज की प्रगति की आधारशिला है शिक्षा। प्राचीन काल से वर्तमान समय तक ज्ञान की अविरलता जारी रही है। अतीत काल में भारतवर्ष का गौरवपूर्ण स्थान यहाँ की शिक्षा पद्घति के कारण ही रहा है। गुरु–शिष्य परम्परा भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण और पवित्र हिस्सा है जिसमें गुरू उत्तराधिकार के रूप में ज्ञान की थाती शिष्य को सौंपता है और इस प्रकार ज्ञान की निरंतरता एक पीढ़ी से दूसरी तक संचारित होती है। गुरु शिष्य के लिए न सिर्फ ज्ञान देने वाला, बल्कि पथ प्रदर्शक और संरक्षक भी होता था। भारतीय संस्कृति में गुरू की भूमिका समाज को सुधार की ओर ले जाने वाले मार्ग दर्शक के साथ ही क्रांति को दिशा देने वाले युग प्रवर्तक की भी रही है जिसके कारण कई धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक परिवर्तन हुए हैं। इस परंपरा को आघात बाह्य आक्रमण और पाश्चात्य संस्कृति के प्रति आकर्षण से लगा और गुरु–शिष्य आत्मियता में कमी आती चली गई। वर्तमान शिक्षा पद्घति में मूल्यहीनता और मर्यादा का क्षरण इन्हीं कारणों से बढ़ी है। आज शिक्षा में मानवीय मर्यादा का ख्याल कम और परीक्षा परिणामों पर अधिक ध्यान दिया जाता है। ज्ञान के विस्फोट के इस दौर में जब सूचना के बहुतेरे माध्यम हैं ,शिक्षा के केंद्र में अब विद्यार्थी हैं शिक्षक नहीं। बच्चे अब परिणाम परक बिषयों का चयन करते हैं। अंक आधारित शिक्षा पद्घति के वर्तमान दौर में ज्ञान के बजाए अंक विद्यार्थियों का लक्ष्य हो गया है। शिक्षा के बाजारीकरण के समय में शिक्षक के प्रति सम्मान का भाव और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा एक बड़ी चुनौती है।

शब्द कुंजी : *शिक्षा, विश्व गुरु, गुरु सम्मान, शिक्षा का व्यवसायीकरण।*

प्रस्तावना:

किसी भी समाज या देश की प्रगति की आधारशिला शिक्षा है।जिस देश की शिक्षा पद्धति उच्च आदर्शों और ऊंचे मानदंडों को अपने आप में संजोए होगी वह देश प्रगति के पथ पर अग्रसर होगा। प्राचीन काल में भारतवर्ष का सबसे गौरवपुर्ण और भास्वर स्वरूप यहां की शिक्षा पद्धति थी।जिसके कारण भारत दुनिया के देशों का आदर्श और अग्रगण्य माना गया और विश्व गुरु होने का गौरव प्राप्त किया। भारतज्ञान, धर्म, दर्शन,योग और आध्यात्म का केन्द्र समझा गया। दुनिया के तमाम हिस्सों से ज्ञान पिपासु लोग भारत आए और ज्ञान सुधा से तृप्त हो कर अपने वतन लौटकर भारत का गुणगान किया। भारत की उत्कृष्ट शिक्षा पद्धति का मूलाधार यहां की सुदृढ़ गुरु–शिष्य परंपरा थी, जिसने भारतीय शिक्षा पद्धति को लगातार मजबूती प्रदान की।

ज्ञान की अविरलता प्राचीन काल से अर्वाचीन काल तक जारी रही है। अतीत का गौरव पूर्ण स्थान हमने अवश्य खो दिया है। जहां तब हम विश्व गुरु कहलाते थे, तक्षशिला, नालन्दा, विक्रमशिला जैसे विश्व विश्रुत विश्वविद्यालय

थे,जिसकी दुनिया में कोई सानी नहीं थी और आज दुनिया के श्रेष्ठतम सौ क्या दो सौ शिक्षा संस्थानों में अपने भारत का कोई नहीं है।

गुरु–शिष्य परंपरा भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण और पवित्र हिस्सा है जिसके कई स्वर्णिम उदाहरण इतिहास में दर्ज हैं। यह परंपरा नई पीढ़ी तक ज्ञान और आध्यात्म पहुंचाने का सोपान है। गुरु–शिष्य परंपरा शिक्षकों और शिष्यों में एक उत्तराधिकार को दर्शाता है। भारतीय संस्कृति में गुरु शिष्य को शिक्षा देता है बाद में वही शिष्य गुरु के रूप में दूसरे को शिक्षा देता है और यह क्रम चलता रहता है। यह परंपरा सनातन धर्म की सभी धाराओं में मिलती है जैसे आध्यात्म,योग, संगीत, कला, वास्तु, खेल आदि।यह आध्यात्मिक संबंध, सलाह की परंपरा है जहां शिक्षायें गुरु से शिष्य को प्रेषित की जाती है।

प्राचीन दौर में गुरु का दर्जा ईश्वर से भी ऊंचा और श्रेष्ठ माना गया है।यह समझा गया है कि गुरु के प्रताप से ही भगवान का दर्शन और उनकी कृपा पाना या उन तक पहुंच पाना संभव है। इसलिए भगवान से पहले गुरु अभिवादन के हकदार हैं। ईश्वर के मुकाबले गुरु की श्रेष्टता स्थापित करने वाले श्लोक और दोहे हमलोग बचपन से पढ़ते–सुनते आए हैं

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरु देवों महेश्वरा
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।

या

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागूं पाय,
बलिहारी गुरु आपने गोविंद दियो बताए। (कबीर)

या फिर :–,

कबीरा ते नर अंध है, गुरु को कहते और,
हरि रूठे तो गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर।

गुरु अर्थात अंधकार से प्रकाश की ओर,अज्ञान से ज्ञान के पथ को आलोकित करने वाला मार्गदर्शक है। प्राचीन काल में गुरु–शिष्य के बीच आत्मिक और प्रगाढ़ संबंध होता था। जहां गुरु का ज्ञान, मौलिकता, नैतिक बल उनका शिष्यों के प्रति स्नेह भाव तथा ज्ञान बांटने का निः स्वार्थ भाव शिक्षक में होती थी। वहीं गुरु के प्रति समर्पण एवं अज्ञाकारिता, अनुशासन शिष्य का सबसे महत्वपूर्ण गुण माना गया है। आचार्य चाणक्य ने एक आदर्श विद्यार्थी के गुण इस प्रकार बताए हैं :–

काक चेष्टा बको ध्यानं श्वान निद्रा तदैव च,
अल्पहारी, गृहत्यागी विद्यार्थी पंच लक्षणम।

गुरु और शिष्य के बीच केवल शाब्दिक ज्ञान का ही आदान–प्रदान नहीं होता था, बल्कि गुरु अपने शिष्य का संरक्षक के रूप में भी कार्य करता था। शिष्यों में यह भरोसा होता था कि गुरु उसका कभी अहित सोच नहीं सकते, यही विश्वास गुरु के प्रति उसकी अगाध श्रद्धा और समर्पण का कारण रहा है। माता–पिता बच्चे को जन्म देते हैं, किन्तु गुरु अपरिपक्व बुद्धि के बालक का भार अपने ऊपर लेकर जीवनोपयोगी ज्ञान द्वारा उसे सफल नागरिक बनाता है, उसके अज्ञान रुपी अंधकार को समाप्त कर ज्ञान रूपी प्रकाश से आलोकित करता है।

गुरु कुम्हार शिष कुंभ है,गढि,गढि काढै खोट,
अंतर हाथ सहार दै बाहर बाहै चोट।

गुरु एक टकसाल है जो अपने सांचे में खुद के प्राणबल,तपोबल के सहारे प्रखर व्यक्तियों का निर्माण करता है। साधारण को असाधारण, तुच्छ को महान बनाता है।देश ने जब भी महानता के शिखर का स्पर्श किया है उसमें सदगुरूओं

का भी हाथ रहा है। गुरु–शिष्य का एक दूसरे के प्रति स्नेह,सम्मान, समर्पण की तमाम कथाओं से प्राचीन भारतीय साहित्य अटा पड़ा है।

त्रेतायुग में भगवान राम अपने भाईयों के साथ गुरुकुल प्रणाली में गुरु वशिष्ठ और गुरु विश्वामित्र से शिक्षा प्राप्त की और सभी विद्यायों में निष्णात होकर मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाये। द्वापर युग में कृष्ण अपने सखा सुदामा के साथ संदीपनी ऋषि के गुरुकुल में सभी गुणों से स्वयंमेव विभुषित होने के बाद भी निर्धारित अवधि तक दत्त चित् भाव से विद्या अध्ययन किया।

युद्ध क्षेत्र में जब अर्जुन बन्धु–बान्धवों के मोह में पड़कर कर्तव्य पथ से विचलित नजर आए तो जोगेश्वर श्री कृष्ण ने उन्हें भागवत गीता का ज्ञान देकर उनके मन से अज्ञान का अंधेरा हटाया। अक्रूर जी को जब अपने ज्ञान का दंभ हुआ तो श्रीकृष्ण ने उन्हें गोपियों के पास भेज कर उत्कट प्रेम और संपूर्ण समर्पण का पाठ पढ़ाया। इसी काल में विद्यादान से मना करने के बावजूद द्रोण की मूर्ति बनाकर एकनिष्ठ भाव से अभ्यास करने वाले महान धनुर्धारी भीलपुत्र एकलव्य ने गुरु दक्षिणा में अपने दाहिने हाथ का अंगूठा काटकर गुरु के प्रति सर्वस्व न्योछावर करने का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। कर्ण ने अपने गुरु परशुराम के लिए अद्भुत सहनशीलता का परिचय दिया बाद के दिनों में आमोद धौम्य ऋषि के प्रति अगाध निष्ठा और समर्पण के उदाहरण प्रस्तुत करने वाले भक्त आरूणी की कथा से हम सभी परिचित हैं।

विश्व इतिहास में भी गुरु के प्रति शिष्य की अगाध समर्पण के उदाहरण मिलते हैं।सिकंदर महान अपने गुरु अरस्तु के मना करने के बावजूद जब उफनते बरसाती नाला को पार करता है बाद में उसी राह से अरस्तु भी पार करते हैं। क्रोधित होकर अरस्तु बोलते हैं कि सिकंदर आज तुमने हमारी बात न मानकर हमारा अपमान किया है। इससे पहले कभी ऐसा नहीं हुआ कि तुमने हमारा कहना नहीं माना हो, फिर आज ऐसा क्यों ? क्या इसलिए कि तुम अब सम्राट हो गए हो ? मुझे गलत ना समझा जाए गुरुदेव मैंने सम्राट के नाते नहीं बल्कि एक शिष्य के नाते पहले नाला पार करके केवल अपना फर्ज पूरा किया है। कैसा फर्ज ? अपने गुरु की सुरक्षा का फर्ज क्योंकि अरस्तु जिंदा रहता है तो हजारों सिकंदर खड़ा कर सकता है लेकिन सिकंदर अरस्तू कहां से लायेगा? इसलिए नाले में मेरे बह जाने से जितना नुकसान होता है उसे कहीं ज्यादा नुकसान आपके बह जाने से होता ।

जिस प्रकार यूनान के इतिहास में अरस्तु ने आम बालक को विश्व विजेता बनने की प्रेरणा दी लगभग उसी काल में आचार्य चाणक्य ने भारत में भी गुरु के प्रशिक्षण और प्रेरणा से एक सामान्य बालक चन्द्रगुप्त को इतनी तेजस्वी बना दिया कि भारत के अब तक के सबसे बड़ा साम्राज्य का संस्थापक माना गया।

अतः गुरु में अगर काबिलियत होगी तो जमीन के जर्रे को भी आसमान का आफताब बनाकर पूरे कायनात को रौशन कर सकती है। जयशंकर प्रसाद की रचना 'चंद्रगुप्त' में आचार्य चाणक्य कहते हैं कि ''शिक्षक कभी साधारण नहीं होता प्रलय और निर्माण उसकी गोद में पलते हैं''। गुरु यदि योग्य होगा तो उसकी योग्यता शिष्य में भी स्थापित होगी। शिष्य की सफलता गुरु के लिए सबसे बड़ा पारितोषिक है।

गुरु–शिष्य परंपरा का आधार गुरुकुल हुआ करती थी जहां छात्र उपनयन संस्कार के बाद गृह त्याग कर अपने गुरु के पास जाते और वहां धर्म, दर्शन, युद्ध विद्या, और जीवन के व्यवहारिक ज्ञान सीखते थे तथा आवश्यक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात समावर्तन संस्कार के पश्चात घर लौटकर अपना लौकिक जीवन प्रारंभ करते थे गुरु–शिष्य परंपरा का आधार सांसारिक ज्ञान से शुरू होता है परंतु उसका चरमोत्कर्ष आध्यात्मिक सारस्वत ज्ञान की प्राप्ति है जिसे ईश्वर प्राप्ति या मोक्ष प्राप्ति भी कहा जाता है।

गुरु एक मशाल है और शिष्य उसका प्रकाश। भारतीय इतिहास में गुरु की भूमिका समाज को सुधार की ओर ले जाने वाले मार्गदर्शक के साथ ही क्रांति को दिशा दिखाने वाले युग प्रवर्तक की भी रही है। जिसके कारण कई

धार्मिक,सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन हुए हैं ।इस संदर्भ में हम शंकराचार्य, वल्लभाचार्य, रामानंद, गुरु समर्थ रामदास, राजा राममोहन राय, दयानंद सरस्वती, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, सावित्रीबाई फुले, ज्योतिबा फुले , पंडित मदनमोहन मालवीय प्रेमचंद, सर सैयद अहमद खान ,राजेंद्र बाबू, आचार्य कृपलानी जाकिर हुसैन, विनोबा भावे का नामों का स्मरण कर सकते हैं। मैं हाल में मधुबनी जिले एक अत्यंत ही प्रतिभाशाली लोगों के गांव सरिसब पाही गया था। इस गांव में १४वीं शताब्दी में न्याय शास्त्र के प्रखर विद्वान भवनाथ मिश्र हुआ करते थे। किसी से कुछ नहीं लेने और अपने साधनों से ही गुजारा करने के कारण इन्हें अयाची मिश्र भी कहा जाता था। इनके पास देश के विभिन्न हिस्सों से जिज्ञासु साधक पढ़ने आते थे। वे पढ़ाने के ऐवज में अपने शिष्यों से दस लोगों को पढ़ाने के संकल्प का गुरुदक्षिणा लेते थे। ज्ञान दान की इस अनूठी परंपरा के कारण काफी लोग लाभान्वित हुए।

समय और सामाजिक,राजनीतिक बदलाव के साथ गुरु– शिष्य परंपरा में भी परिवर्तन आता गया। इस परंपरा को पहला आघात वाह्य आक्रमणों से लगा क्योंकि आक्रमणकारियों का पहला आकर्षण हमारी संस्कृति नहीं बल्कि यहां की समृद्धि थी, साथ ही साम्राज्य विस्तार की लालसा थी। इन आक्रमण के कारण हमारे देश में सामाजिक,धार्मिक,राजनीतिक जीवन में उथल–पुथल प्रारंभ हो गया जिससे गुरु–शिष्य परंपरा विश्रृंखलित हुई और क्रमशः कमजोर होती चली गई। लेकिन परंपरा पर सबसे बड़ा आघात तब लगा जब हम भारत वासी पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति के रंग में रंगने के कारण उस आदर्श से कोसों दूर होते चले गये।

शिक्षा तब भी श्रेष्ठ थी जब शिष्य गण भिक्षाटन कर खुद खाते तथा गुरुकुल के गुरुओं को भी खिलाते थे। शिक्षा तब भी प्रतिष्ठित थी, जब उपस्कर के अभाव में शांति निकेतन के वृक्ष की डालियों के नीचे पठन–पाठन का कार्य होता था आज अच्छे भवन हैं, शिक्षकों की संख्या भी ठीक–ठाक है पोशाक, मध्यान्ह भोजन,साइकिल योजना और तमाम तरह की योजनाएं हैं। फिर भी सब को शिक्षित करने और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने का सपना साकार नहीं हो पा रहा है। शायद सच्ची लगन, ईमानदारी, कड़ी मेहनत का अभाव दिखता है। कुछ नया कुछ अलग करने की आवश्यकता है।

गुरुकुल परंपरा का कमजोर होते ही गुरु–शिष्य संबंधों में आत्मीयता की कमी आती चली गई। हम पाते हैं कि आज कल गुरु–शिष्य परंपरा प्रतिष्ठा खोते जा रही है। आए दिन शिक्षकों और विद्यार्थीयों द्वारा एक–दूसरे के साथ दुर्व्यवहार की खबरें सुनने को मिलती है शिक्षक और छात्र दोनों ही समाज के अंग हैं समाज में सर्वत्र दिख रहे नैतिक मूल्यों के गिरावट का असर इन पर निश्चित रूप से पड़ा है।

प्राचीन काल में जो युवक अपने माता– पिता गुरु के लिए सर्वस्व होम करने के लिए तत्पर रहता था वह आज इनके अपमान में भी कोई दोष नही देखता। यह वर्तमान शिक्षा पद्धति के कारण ही इन्हें उचित शिक्षा नहीं मिल रही है। दूषित शिक्षा पद्धति का ही परिणाम है कि आज चारों ओर भ्रष्टाचार और अनुशासनहीनता का बोलबाला है।

बच्चों में संवेदनशीलता, सामाजिक चेतना, सद्भावना, लोकाचार, कर्तव्यपरायणता, दया जैसे संस्कार देना शैक्षणिक संस्थानों का ही धर्म है यह लेक्चर से ही नहीं बल्कि कम्युनिटी एक्सपोजर, इंटरएक्टिव तकनीक से संभव होगा इसके लिए हमें पुरातन शिक्षा पद्धति के कुछ बातों को प्रयोग में लाना होगा।

हमें वे गुजरे जमाने को याद करना चाहिए जब शिक्षक की प्राथमिकता देश को अच्छा नागरिक और बेहतर माहौल देना था। ट्यूशन व्यवस्था नहीं थी शिक्षक अतिरिक्त वर्ग लेकर, ट्यूटोरियल क्लास लेकर,नोट्स चेक कर, पुस्तकें देकर, माता–पिता को परामर्श देकर जो व्यक्तिगत प्रभाव छात्रों पर पैदा होता था। इन सारी क्रिया कलापों से शिक्षक छात्र में आत्मिक संबंध विकसित होता था। वे शिक्षकों की इज्जत करते थे। गलती करने पर शिक्षक भरपूर पीटाई भी करते थे। माता–पिता भी उन्हीं विद्यालयों में अपने बच्चों का नामांकन करवाते थे जहां सख्ती की जाती थी । शिक्षक विद्यालय से बाहर भी छात्र की गतिविधियों पर नजर रखते थे कुछ अन्यथा नजर आने पर दंडित करते थे। दंडित करने के एक से एक और कठोर तरीके आजमाए जाते थे।शिक्षकों की ये सारी सक्रियता बस छात्रों को लगातार अच्छा बनाने

चेष्टा थी।

कैंपस में सांस्कृतिक गतिविधियां भी घटी है इसलिए ना तो कक्षा और ना पढ़ाई छात्रों को व्यस्त कर पा रही है खेलकूद, नाटक–मंचन ,गीत–संगीत, कविता पाठ जैसी गतिविधियों के अभाव के कारण शैक्षणिक संस्थानों का आकर्षण घटा है।

कैंपस का माहौल खराब होने की एक बड़ी वजह वर्ग में उपस्थिति का ढीला होना है।अधिकतर कक्षा में नामांकित छात्र के 10 से 20 फीसदी बच्चे आते हैं,वे सिर्फ डिग्री के लिए नामांकन कराते हैं वे नामांकन फार्म भरने परीक्षा देने से नाता रखते हैं ऐसे में छात्र–शिक्षक संबंध कहां से विकसित होंगे कम उपस्थिति के बाद भी बच्चों के फॉर्म भरे जाते हैं।

परीक्षा की गलत पद्धति आज के दौर में 25% पाठ्यक्रम पढ़कर ही उच्चतम अंक हासिल किए जा सकते हैं ना अनुपस्थिति का खौफ है ना परीक्षा का दबाव है ।कुंजीका पढ़ी जाती है। शिक्षक भी छात्र हित के नाम पर कदाचार करने की छूट देते हैं। परीक्षा में योग्यता से अधिक अंक देकर छात्र हित का नाम देकर पूरी व्यवस्था चौपट करने में अपना योगदान दे रहे हैं।

जहां कॉलेज में छात्र घट रहे हैं कोचिंग में भीड़ बढ़ रही है। आज हमारे अध्ययन के केंद्र में ज्ञान नहीं नौकरी है। प्रतियोगी परीक्षाओं के अनुरूप पाठ्यक्रम बनाए जाएं कॉलेज में भी कोचिंग के जैसा माहौल बनाया जाए आज अभिभावक नामांकन कराते ही अच्छी प्लेसमेंट की उम्मीद करने लगते हैं। ज्ञान के विस्फोट के इस दौर में जब सूचना के बहुतेरे माध्यम हैं। आज शिक्षा के केन्द्र में विद्यार्थी है शिक्षक नहीं। अब उन्हें दंडित कर कर चीजों को आगे नहीं बढ़ा कर ले जा सकते। इसलिए मित्र भाव और बाप नहीं बड़े भाई की भूमिका में आना होगा क्योंकि जो शिक्षक बच्चों को प्रोत्साहित करेगा, समझाएगा, वही विद्यार्थी को दूर तक ले जाएगा।

आज प्रतियोगिता के केंद्र में नहीं होने के कारण भाषा साहित्य, दर्शन जैसे विषय हाशिए पर चले गए हैं। मैं समझता हूं कि यही विषय मनुष्य को पूर्णता प्रदान करते हैं लेकिन रोजगार की अंधी दौड़ में ये विषय उपेक्षित हो गये। जीवन मूल्य , कौशल खेल, संगीत, ललित कला हमारे पाठ्यक्रम से लगभग बाहर हैं। बच्चे रैंकिंग के चक्कर में हैं। परम्परागत भूमिका बदल गयी है, डिजिटल संपर्क बढ़ रहा गया है। लेकिन ज्ञान का प्रयोग तो शिक्षक से ही सीखना होगा

हाल के वर्षों में शिक्षकों से अभिभावकों और सरकार की बहुत सारी अपेक्षाएं होती है और उन अपेक्षाओं को शीघ्रता से पूरी करने की भी कामना होती है। लेकिन दूसरी तरफ शिक्षकों की सुविधा और क्रियाशील माहौल देने की चिंता नहीं रहती है।

हमारी शिक्षा पद्धति अंक आधारित हो गई है ज्ञान के बजाय अंक हासिल करने पर जोर दिया जाता है बच्चों में संपूर्ण पाठ्यक्रम को डाउनलोड करने के बजाय इमैजिनेशन एवं इनोवेशन की खुराक डालनी चाहिए। उन विद्यार्थियों में सोचने की शक्ति जानने की उत्सुकता बढ़ाने पर जोर देना चाहिए। शिक्षा की खराब हालत के लिए शिक्षकों को जवाबदेह माना जाता है जबकि शिक्षक,हमारी शिक्षा व्यवस्था का एक हिस्सा मात्र है। देश में 1980 के बाद सरकारी स्कूल के प्रति विश्वास घटा है। संविदा शिक्षक,पैरा शिक्षक ,अन्य ढेर सारे गैर शैक्षणिक कार्य करने की जबबादेही । आज शिक्षकों में सिखने की योग्यता में कमी एवं उत्साह में कमी है। शिक्षा देने का लिए न परिपक्व शिक्षक हैं न ज्ञान पाने की ललक वाले विद्यार्थी।

आज का दौर पहले से उलट है, सोच बदल गई है , सामाजिक मूल्य भी बदले हैं , निजी शिक्षक, कोचिंग संस्थानों का बोलबाला है। सब कुछ पांच सितारा बाजार है जहां गुरु से लेकर मेधावी छात्रों की बढ़िया पैकेजिंग करके भरपूर मार्केटिंग की जाती है।

आज जरूरत इस बात की है कि हम शिक्षक छात्रों के बीच आत्मिय संबंधों का कैसे विकास करें?हमारी संस्कृति की अमूल्य धरोहर गुरुकुल परंपरा को कैसे पुनर्जीवित करें। विद्यार्थी और शिक्षक दोनों का ही दायित्व है कि वे इस महान परंपरा को बेहतर ढंग से समझें। और एक अच्छे समाज के निर्माण में अपना योगदान दें। आखिर में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की यह पंक्ति उपयुक्त ही है कि :–

हम कौन थे ? क्या हो गए ? क्या होंगे अभी ?

आओ विचारें मिलकर यह समस्याएं सभी।

सन्दर्भ सूची:

1. राय, सुनील. (२०१०). ''गुरु–शिष्य परम्पराः संस्कृति के सम्मान में.'' शिक्षा और संस्कृति, १(२), २५–३६.
2. पाण्डेय, रविन्द्र. (२०१७). ''गुरु शिष्य परम्परा में भारतीय संस्कृति की अनुपमता.'' धार्मिक अनुभव, ५(३), १०४–१११.
3. सिंह, अशोक. (२०२१). ''गुरु शिष्य परम्परा का ऐतिहासिक अध्ययन.'' संस्कृति और समाज, ७(४), १५०–१५७.
4. मिश्र, रामेश्वर. (२०१५). ''गुरु शिष्य परम्परा और धार्मिक दृष्टिकोण.'' धार्मिक अध्ययन, ३(१), ६७–७८.
5. गोस्वामी, सुमित्रा. (२०१८). ''गुरु शिष्य परम्परा और समाज.'' साहित्यिक अध्ययन, २(२), ३००–३१०.
6. तिवारी, राहुल. (२०१६). ''गुरु शिष्य परम्परा और आध्यात्मिकता.'' आध्यात्मिक जीवन, ४(५), १२५–१३२.
7. यादव, आरती. (२०२०). ''गुरु शिष्य परम्परा और मानवता.'' मानविकी, ६(१), २३०–२४२.
8. शर्मा, मनोहर. (२०१६). ''गुरु शिष्य परम्परा और सामाजिक संगठन.'' समाज विज्ञान, २(३), ८०–९०.
9. यादव, विजय. (२०१४). ''गुरु शिष्य परम्परा में आधुनिकता का समावेश.'' आधुनिक अध्ययन, ८(४), १४०–१५०.
10. भट्ट, सुरेश. (२०११). ''गुरु शिष्य परम्परा का साहित्यिक महत्व.'' साहित्य संग्रह, १०(२), ५५–६७.